CHAPTER 44

SANSKRIT

Doctoral Theses

337. अग्रवाल (मनीषा)
संस्कृत के द्विरूपकोशों का समालोचनात्मक अध्ययन ।
निर्देशिका : डॉ. अंजू सेठ
Th 14236

सारांश

संस्कृत द्विरूपकोशों की परम्परा में उपलब्ध तीन कोशों - पुरूषोत्तम देव कृत द्विरूपकोश, महेश्वर कृत शब्दभेदप्रकाश तथा भरतमल्लिक कृत द्विरूपध्वनि संग्रह में से, पुरूषोत्तम तथा भरत बंग प्रदेश से सम्बन्धित व बौद्ध थे, जबकि महेश्वर गाधिपुर निवासी थे । पुरूषोत्तम ने त्रिकाण्ड, हारावली इत्यादि का प्रणयन करते समय ही द्विरूप शब्दों को ध्यान में रखना प्रारमभ कर दिया होगा । तत्पश्चात् उसने इन द्विरूप शब्दों का त्रिकाण्ड अथवा हारावली में समावेश न करके स्वतन्त्र रूप से द्विरूपकोश लिखा है । जो उपलब्ध सभी द्विरूप कोशों में सबसे प्राचीन माना जाता हे । जिसमें भिन्न वर्तनी, वर्ण मात्रा भेद वाले शब्दों का संकलन किया गया है । शब्दों में परिवर्तन के कारणों का अध्ययन करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि सादृश्य, व्याकरण, लिंग परिवर्तन, प्रातिपदिकों में परिवर्तन, उच्चारण (लघ्वीकरण अथवा दीर्घीकरण) अज्ञानता, लेखन, अर्थ विस्तार (तद्धित प्रतयय) इत्यादि के कारण शब्दों के रूप में परिवर्तन हो रहा था । इन सभी कोशकारों ने अपने - अपने द्विरूप कोश लिखकर, समाज में उस समय जो परिवर्तन हो रहे थे, उन्हे दृष्टिगत् किया है । इस आधार पर हम यह कल्पना कर सकते है कि लोक के कारण शब्दों में कितना परिवर्तन हो जाता है, तथा कहीं-कहीं उन शब्दों का अर्थविस्तार या अर्थ परिवर्तन हो जाता है । अन्ततः लोक ही शब्दों के द्विरूप होने का सबसे बड़ा कारण है ।

विषय सूची

1. संस्कृत कोश : सामान्य परिचय 2. उपलब्ध द्विरूपकोश-पुरूषोत्तदेव :

द्विरूपकोश 3. शब्दभेदप्रकाश : महेश्वर 4. द्विरूपध्वनि संग्रह : भरतमल्लिक 5. अनुपलब्ध कोश 6. पुरूषोत्तम, महेश्वर तथा भरत के द्विरूपकोशों का तुलनात्मक अध्ययन 7. अधिकृत द्विरूप शब्दों का वैज्ञानिक विश्लेषण । उपसंहार । ग्रंथ सूची ।

338. अर्चना कुमारी

प्रस्थानत्रयी शाङ्करभाष्य में मनस् का विवेचन ।

निर्देशिका : डॉ. शकुन्तला पुञ्जानी

Th 14235

सारांश

प्रस्तुत अध्ययन का लक्ष्य प्रस्थानत्रयी में वर्णित विचारों के आधार पर शाङ्करभाष्य के परिप्रेक्ष्य में मनुष्य के दुःखों का कारण, निवारण, आचरण विचार इत्यादि से मानवता का निर्माण करने में सहायता तथा सुख, शान्ति के उपायों का विवेचन करना है । मनस्-परिष्करण हेतु इन्द्रियसंयम, शास्त्रानुकूल आचरण, सद्ग्रन्थों को अध्ययन भी प्रमुख साधन है । कर्मयोग तथा भक्तियोग भी मन को शुद्ध बनाने वाले हैं । अहंकार को छोड़ फल की इच्छा को छोड़ निष्काम भाव से कर्म करना ही कर्मयोग है । भक्ति भी मनस् शुद्धि का साधन है । ईश्वर के नाम, गुण तथा कीर्ति तथा स्वरूप का चिन्तन भक्ति है । यह मन का ही श्रेष्ठ भाव है । तृतीयप्रस्थान में भक्ति को गुह्यविद्या बताया गया है । ईश्वर के प्रति निरतिशय प्रेम, श्रद्धा, विश्वास ही भक्ति है । शङ्कराचार्य ने भक्ति को अनुभव सहित विज्ञान कहा है । अनन्य भक्ति के द्वारा ही पारमार्थिक तत्त्व प्रत्यक्ष रूप से ज्ञेय हे । कर्मयोग तथा भक्ति योग से शुद्ध अनतःकरण में ज्ञान की उत्पत्ति होती है, तदनन्तर शीघ्र ही मुक्ति हो जाती है । उपासना भी भक्ति का ही एक अंग है उपास्य वस्तु को शास्त्रोक्त विधि से बुद्धि का विषय बनाकर उसके समीप पहुंचकर तेल धारा के तुल्य समान वृत्तियों के प्रवाह से दीर्घकाल तक उसमें स्थित रहना ही उपासना है । उपासना एक स्थान पर बैठकर करनी चाहिए। अद्वैत वेदान्त में श्रवण, मनन तथा निदि्ध्यासन को भी मनस्-परिष्करण का साधन माना गया है । छः लिंगों उपक्रम, उपसंहार, अभ्यास, अपूर्वता, फल, अर्थवाद तथा उत्पत्ति के द्वारा वेदान्त वाक्यों का अद्वैत वस्तु परब्रह्म में तात्पर्य निश्चय करना श्रवण कहलाता है यह आध्यात्मिक साधना की प्रथम श्रेणी है । मनन इसका द्वितीय सोपान है । शास्त्र तथा आचार्य के मुख से श्रवण किए गए उपदेशों का चिन्तन ही मनन है । मनन करने वाला ही मुनि है । तत्त्व के व्याखयान को सुनकर अर्थतः निश्चय करके ध्यान करना

ही निदिध्यासन है । श्रवण, मनन, निदिध्यासन के सोपानों पर चढ़ता हुआ साधक परब्रह्म साक्षातकार सरलता से कर लेता है ।

विषय सूची

1. भूमिका-अध्ययन का परिप्रेक्ष्य एवं रूपरेखा 2. प्रस्थानपूर्व, प्रस्थानत्रयी तथा अन्य दर्शनों में मनस् 3. मनस् अन्तःकरण, इन्द्रिय तथा मनस् का अन्य इन्द्रियों से सम्बन्ध 4. मनस् का कार्यक्षेत्र तथा मूल 5. सांसारिक व्यवहार में मनस् का योग 6. पारमार्थि ज्ञान मे मनस् का योग 7. मनस्-परिष्करण के साधन । उपसंहार । ग्रंथ सूची ।

339. गुलाब सिंह

भरत के उत्तर एवं आनन्दवर्धन के पूर्व की काव्यशास्त्रीय कृतियों में रस विवेचन ।

निर्देशिका : डॉ. सावित्री गुप्ता

Th 14233

सारांश

संस्कृत साहित्य-शास्त्र के अनुशीलनोपरान्त ज्ञात हुआ कि काव्य के स्वरूप तथा इसके (रस, गुण, अलंकार आदि) पर साहित्य-शास्त्रियों द्वारा अति विशद विवेचना की गई है परन्तु भरत के पश्चाद् काव्यशास्त्री-परम्परा के अन्तर्गत अलंकार-युगीन साहित्य-शास्त्रियों ने काव्य के मुख्य तत्व रस को उपेक्षित कर अलंकार एवं रीति को ही अपनी विस्तृत विवेचना का विषय बनाया। परिणामतः इस युग में रस गौण हो गया । ध्वनि की स्थापना के पश्चात् ही रस काव्य की आत्मा के रूप में सुप्रतिष्ठित हुआ । इसलिए अलंकार-युग के साहित्यशास्त्रियों की रचनाओं में रसान्वेषण का विवेचन किया है । संभवतः अलंकार-युग में रस का गौण्पा होना उस युग की तात्कालिक परम्परा का ही परिणम था, वस्तुतः तो रस का काव्य का प्रमुख ततव होना शाश्वत सत्य ही है । अलंकार एवं रीतिवादी काव्यशास्त्रियों ने भले ही रस को अपनी विवेचना का विषय न बनाया हो तथापि रस की उपस्थिति तो सार्वकालिक है । उनके द्वारा परोक्ष रूप से की गई रस चर्चा का आनुसन्धानिक दृष्टि से अध्ययन करके अभाव में भाव का अन्वेषण करना ही इस शोध-कार्य का उद्देश्य है ।

विषय सूची

1. रस सिद्धान्त के विकास की ऐतिहासिक परम्परा 2. भरत की उत्तरवर्ती एवं आनन्दवर्धन की पूर्ववर्ती काव्यशास्त्रीय कृतियां 3. भामह कृत रस विवेचन 4. दण्डी कृत रस विवेचन 5. वामनकृत रस विवेचन 6. उद्भट्टकृत रस विवेचन 7. रुद्रट कृत रस विवेचन 8. तुलनात्मक समीक्षा 9. उपसंहार । ग्रंथ सूची ।

340. जितेन्द्र सिंह

बल्लालसेन के अद्भुतसागर का समालोचनात्मक अध्ययन : उत्पत्ति, अद्भुत एवं निमित्त के विशेष संदर्भ में ।

निर्देशक : प्रो. एन एस शुक्ला तथा प्रो. देवेन्द्र मिश्रा

Th 14231

सारांश

ज्योतिषशास्त्र के पुरोधा विद्वान् वराहमिहिर ने भी अपनी उत्कृष्ट रचना 'बृहत्संहिता' में ज्योतिष सम्बन्धी विविध प्रसंगों को उद्घाटित किया है । इस प्रकार इसी सामग्री को आधार बनाकर बल्लालसेन इसे और अधिक तर्कसम्मत प्रक्रिया से परिष्कृत एवं संवर्द्धित करने में अत्यधिक सफल सिद्ध हुए हैं । वराहमिहिर की तुलना में बल्लालसेन द्वारा उद्घाटित सामग्री अत्यधिक सारगर्भित, प्रामाणिक ओर उपयोगी सिद्ध हुई है । इस प्रकार वर्तमान एवं आधुनिक परिवेष में भी हम बल्लालसेन की इस रचना को अत्यधिक महत्त्वपूर्ण एवं प्रासंगिक पाते हैं । अद्भूत शब्द को वृद्धगर्ग और वृहस्पति के साथ-साथ स्वयं बल्लालसेन भी व्याख्यायित किया है । बल्लालसेन ने जहां अद्भुतों को नैमित्तिक और अनैमित्तिक की श्रेणी में विभाजित किया है और इसे उत्पात का भी नाम दिया है । प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में वटकणिका का आश्रय लेते हुए प्रकृति के नियमों के विपरीत आचरण को ही उत्पात का कारण माना गया है । वहां निगदित है कि उत्पातों का प्रादुर्भाव मनुष्यों के अनाचार से ही होता है । ये उत्पात दिव्य, नाभस और भूमिज कहे गए है । मनुष्यों द्वारा विपरीत आचरण से कुपित होकर देवता जो उत्पात करते हैं वे दिव्य, प्रकृति एवं आकाश जो उत्पात करता है वे नाभस और स्वयं पृथ्वी के द्वारा जो उत्पात होता हैं, उन्हें भूमिज कहा जाता है । इन उत्पातों के शमन का भी प्रावधान है, शान्ति के द्वारा जो इनका उपाय करते हैं उन पर इनका कुप्रभाव नहीं पड़ता और जो नास्तिक बनकर इनके शमन का यत्न नहीं करते थे इन उत्पातों के कोपभाजन का शिकार बनकर विनष्ट हो जाते हैं । शकुनों का संकेतज्ञान ग्रहोपग्रहो, प्रकृतिक तत्वों, कुछ विशिष्ट पशुपक्षियों, शारीरिक लक्षणों एवं स्वप्नविचार द्वारा विश्लेषित

किया गया । इस प्रयत्न के फलस्वरूप शकुन सम्बन्धी अध्ययन से युक्त अनेक ग्रंथ प्राचीन ऋषि-मुनियों ने हमारे समक्ष उपस्थित किए तथा हमें अपनी सुरक्षा के प्रति जागरूक किया । दूरगामी दूरदर्शक यन्त्रों के अभावकाल में भी सूर्य, चन्द्र तथा अन्य नक्षत्रों के बदलते रंग दर्शन और अदर्शन तथा ग्रहणकाल में उत्पन्न उनके परिवर्तन को सूक्ष्म दृष्टि द्वारा उनकी गतिविधि का आकलन कर मनुष्य के हित अथवा अहित के प्रति उनके संचरण का अध्ययन भारतीय मनीषियों को ज्ञान के क्षेत्र का प्रवर्तक तथा संचालनकर्त्ता बना देता है । उनके इस ज्ञान-विश्लेषणात्मक प्रवृत्ति के प्रति हम नतमस्तक हैं । शकुन क्षेत्र के दो महनीय मनीषी वसन्तराज एवं बल्लालसेन अपूर्व प्रतिभा के धनी प्रतीत होते हैं जिन्होंने अन्य मनीषियों तथा वराहमिहिर जैसे मेधावी ज्योतिषशास्त्र प्रवर्तकों को उपने अध्ययन में समाविष्ट कर हमें अपनी सुरक्षा अपने आप ढूँढ़ लेने के लिए उत्साहित किया ।

विषय सूची

1. भूमिका 2. दिव्याश्रय 3. आन्तरिक्ष आश्रय 4. भौम आश्रय । उपसंहार । ग्रंथ सूची ।

341. निरूपमा

साहित्य-दर्पण की विज्ञप्रिया टीका का आलोचनात्मक अध्ययन ।

निर्देशक : डॉ. गिरीश चन्द्र पन्त

Th 14230

सारांश

साहित्यशास्त्र एक ऐसी विधा है, जो जीवनोपयोगी आदर्श प्रस्तुत करने के साथ-साथ काव्य अथवा नाट्य के माध्यम से जीवन के प्रत्येक अंगों का स्पर्श करता है । "क्रियाशीलता ही जीवन की सफलता की कसौटी है" - यह सार्वभौमिक सत्य है । कामना क्रिया की उत्पति का मूल है । जीवनयापन हेतु क्रिया करना मानव की आवश्यकता है । 'विज्ञप्रिया-टीका' 'साहित्य-दर्पण' पर लिखी गई एक विस्तृत और विद्वतापूर्ण टीका है, जिसमें केवल साहित्य-दर्पण के सभी तत्वों का ही विवेचन नहीं है अपितु इसमें काव्यप्रकाश, नाट्शास्त्र, ध्वन्यालोक, काव्यालंकार, दशरूपक आदि प्रसिद्ध अलंकारशास्त्र-ग्रंथों के विषयों का भी विवेचन है, तथा विश्वनाथ के साथ-साथ मम्मट के मत को भी अभिव्यक्त किया गया है। अनेक स्थलों पर विश्वनाथ की अपेक्षा मम्मट के कथन का समर्थन है । जैसे- काव्य-प्रयोजन, काव्य-लक्षण, अभिधा, लक्षण और व्यंजना शब्द-शक्ति, व्यंजना-स्थापना काव्य-दोष

तथा काव्यगुण आदि । विज्ञप्रिया अपने नामोनुकूल विद्वानों की प्रिया अर्थात् विद्वानों के द्वारा सम्मान प्राप्त टीका है । विश्वनाथ ने साहित्य-दर्पण में जहां अनेक स्थानों पर विषय का स्पष्टीकरण नहीं किया है, वहीं टीकाकार ने उन विषयों को स्पष्ट करने का सार्थक प्रयास किया है । अतः विज्ञप्रिया टीका काव्यप्रकाश तथा साहित्य-दर्पण दोनों काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों पर प्रकाश डालती है ।

विषय सूची

1. विषय-प्रवेश विमर्श 2. काव्य-प्रयोजन, लक्षण तथा शब्द-शक्ति विमर्श 3. रस-विमर्श 4. काव्य-नाट्य विमर्श 5. दोष-गुण-रीति-विमर्श । उपसंहार । ग्रंथ सूची ।

342. मण्डल (ललित कुमार)
महाभाष्य में लौकिक-न्याय एवं लोकोक्तियाँ : एक अध्ययन।
निर्देशक : डॉ. मिथिलेश चतुर्वेदी
Th 14232

सारांश

इस शोध-प्रबन्ध की प्रमुख विशेषता यह है कि महाभाष्य में प्रयुक्त धार्मिक, सांस्कृतिक, दार्शनिक, सामाजिक आदि विविध लौकिक-न्यायों एवं लोकोक्तियों का प्रायः आधुनिक परिप्रेक्ष्य मं व्यवहारपरक अध्ययन है । इसमें मैंने सबसे पहले तो प्रसंग बता कर विवेच्य न्याय अथवा लोकाक्ति का अर्थ बताया है; उसके बाद व्याकरण की जिस बात को समझाने के लिए न्याय अथवा लोकोक्ति का प्रयोग किया गया है, उसका विवेचन किया है; अन्त में उस न्याय अथवा लोकोक्ति की व्यावहारिक जीवन में उपयोगिता बता कर परवर्ती या पूर्ववर्ती ग्रन्थों में उन न्यायों और लोकोक्तियों के प्रयोग के विषय में भी बताया है । इस शोध-प्रबंध में संस्कृत साहित्य में प्रसिद्ध एवं महाभाष्य में प्रयुक्त लौकिक-न्यायों तथा लोकोक्तियों की चर्चा तो की ही गयी है; साथ ही कुछ ऐसे न्यायों ओर लोकोक्तियों का विवेचन है, जो आज तक किसी के द्वारा प्रयुक्त हुए हैं; तद्यथा - अनग्निशुष्कैध-न्याय, दुष्टशब्द-न्याय, गुरुताडन-न्याय, मातृवत्स-न्याय आदि न्याय तथा प्रधानेकृतो यत्नः फलवान् भवति, नात्यन्तायाज्ञानं शरणं भवितुमर्हति, अग्निर्यददग्धं तद्दहति, नहि गोधा सर्पन्ती सर्पणादहिर्भवति इत्यादि लोकोक्तियाँ ।

विषय सूची

1. महाभाष्य एवं पतंजलि की व्यपापक जीवन-दृष्टि 2. न्याय, लोकोक्ति, कहावत, मुहावरा तथा सूक्ति का स्वरूप 3. धार्मिक एवं सांस्कृतिक लौकिक-न्याय 4. दार्शनिक लौकिक-न्याय 5. व्यावहारिक लौकिक-न्याय 6. सामाजिक लौकिक-न्याय 7. प्राकृतिक लौकिक-न्याय 8. विविध लौकिक-न्याय 9. धार्मिक एवं सांस्कृतिक लोकोक्तियाँ 10. दार्शनिक लोकोक्तियाँ 11. सामाजिक लोाकोक्तियाँ 12. व्यावहारिक लोकोक्तियाँ 13 विविध लोकोक्तियाँ । उपसंहार । ग्रंथ सूची एवं परिशिष्ट ।

343. शर्मा (सनन्दन)

डॉ. श्रीनाथ श्रीपाद हसूरकर के उपन्यासों का आलोचनात्मक अध्ययन।

निर्देशिका : डॉ. वन्दिता अरोड़ा एवं प्रो. उषा चौधुरी

Th 14234

सारांश

उपन्यास अर्वाचीन साहित्य विधाओं में अन्यतम किन्तु सशक्त और गतिशील विधा है । इसमें लेखक अपने सभी मनोगत विविध भावों को प्रभावी ढंग से अभिव्यक्त कर सकता हे । यद्यपि संस्कृत साहित्य में उपन्यास शब्द का प्रयोग और उपन्यास का आविर्भाव बहुत पहले ही हो चुका था किन्तु आधुनिक अर्थ में उपन्यासों की रचना अन्यान्य भारतीय भाषाओं तथा आंग्ल भाषा में सर्जित उपन्यासों के अनुवाद से हुई है । उसके बाद स्वतन्त्र रूप से इनकी रचना की जाने लगी । इस क्रम में डॉ. श्रीनाथ श्रीपाद हसूरकर ने ऐतिहासिक उपन्यासों की विरल परमपरा को भारतीय इतिहास के विभिन्न काल खण्डों में घटित घटनाओं को आधार बनाकर पांच उपन्यासों की रचना करके इस धारा को समृद्ध किया है । उन्होंने तत् तत् काल खण्ड से समबन्धित उपन्यास के आधारभूत देश, काल, वातावरण, संस्कृति आदि तत्त्वों की यथार्थता की रक्षा करते हुए, कथावस्तु को अत्यन्त मनोहारि, जीवन्त और अभिनव ढंग से प्रस्तुत किया है । उनका चरित्र चित्रण बाह्य तथा आभ्यन्तर दोनों ही रूपों में अप्रतिम है । वे पात्रों के बाह्य स्वरूप से लेकर उनके सूक्ष्माति सूक्ष्म मनोभावों, आवेगों एवं आशकाओं को प्रभावपूर्ण तरीके से अंकन करने में सफल रहे है । उनके संवाद कहीं कहीं अधिक बड़े होते हुए भी चुस्त सटीक और पात्रों के अभिप्राय के व्यंजक है । एक ऐतिहासिक उपन्यासकार की सफलता इसी में निहित है कि उसके उपन्यासों में सम्बन्धित काल-खण्ड समाज ओर संस्कृति की समुचित प्रस्तुति हो डा. हसूरकर के पांचो उपन्यासों में तत् तत् कालीन जन जीवन तथा राजनेतिक, सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक यथार्थ की

काव्यात्मक अभिकल्पना सहित अभिव्यक्ति हुई है। रस की दृष्टि से उनके उपन्यासों का विवेचन करने से स्पष्ट होता है कि उनके सभी उपन्यासों में सुन्दर रस परिपाक हुआ है । यद्यपि इनके पांचों उपन्यासों के करुण रस प्रधान है तथापि श्रृंगाार वीर-भयानक, वीभत्स आदि की भी मनमोहक अभिव्यंजना हुई है । उनके एक उपन्यास प्रतिज्ञापूर्तिः के आरम्भ में वैदिक मंत्र और बाद में तीन अनुष्टुप् प्राचीन आख्यायिका की परमपरा को व्यकत करने हैं । इन पांचों उपन्यासों में अलंकार विन्यास सहज ओर नैसर्गिक है । उनकी भाषा अन्य आधुनिक भारतीय भाषाओं में रचित उपन्यासों के समान सरस,सरल ओर प्रवाहमय हे जिससे कथानक में कहीं गतिरोध उपस्थित नहीं होता । उनकी शैली में प्राचीन व आधुनिक अभिनव शैलियों का मंजुल मिश्रण हे । अतः वे सफल आधुनिक ऐतिहासिक उपन्यासकारों की कोटि में प्रमुखतया गणनीय है ।

विषय सूची

1. डॉ. श्रीनाथ श्रीपाद हसूरकर (व्यक्तित्व और कृतित्व) 2. उपन्यास की परिभाषा एवं स्वरुप 3. आलोच्यमान उपन्यासों के कथानक 4. प्रस्तुत उपन्यासों में चरित्र विकास एवं चित्रण शैली 5. विवेच्य उपन्यासों में अभिव्यक्त समाज और संस्कृति 6. विचाराधीन उपन्यासों का काव्यशास्त्रीय विवेचन 7. उपसंहार । ग्रंथ सूची ।

344. SARKAR (Swagata)
Contribution of Modern Sanskrit writers of Bengal to Nationalism
Supervisors : Dr. Sharda Sharma and Dr. M I Khan
Th 14237

Abstract

Sanskrit is an interesting lingual medium dealing with Indian history, culture and civilization. Sanskrit literature deals with various subjects from the days of Vedas, till the contemporary age. Great emphasis has been laid on the subject of motherland and national integration. Nationalism and national integration have found a nice expression in various works like drama, prose, poetry. Writers of such works belong to various parts of India and when there is a question of national integrity, they forget the state barrier. So all the works done in various parts of the nation are for its people as whole. In this field Bengal does not lag behind. A virile note of nationalism was marked in the literary compositions dealing with the stories of Prithviraj Chauhan, Rana Pratap and shivaji. An epic in 16 cantoes

entitled 'Sryankakavya' was composed on the rise of the Sikhs. Mm. Haridas siddhantavagisa of Bengal composed three epics surcharged with the inflow of patriotism. The 'Amarmangalam' of Sj.Panchanan Tarkaratna of Bhatpara, west Bengal is a superb work of art on the lives and the legends of the Rajput warriors of the middle ages.Mm. vidhusekhara Sastri of santiniketan composed in racy sanskrit prose the 'Bharatacarita'. Dwelling at the same time on the immortal glory of India Mm.damodarasastri of Puri composed the poem 'Bharatagaurava'.

Contents

1. Nationalism - A general introduction. 2. Sanskrit and nationalism. 3. Nationalsm in Sanskrit literature - A brief study 4. Bengal and Nationalism. 5. Nationalism in the works of Bengali Sanskrit writers. 6. The life and works of pandit haridasa siddhantavagish. 7. Dramas of Haridasa Siddhantavagish. 8. Beliefs of Haridasa Siddhantavagish. 9. Conclusion. Bibliography and Appendix.

M.Phil Dissertations

345. अंजू कुमारी
फलितशास्त्र में तृतीय एवं चतुर्थ भाव का महत्त्व ।
निर्देशक : डॉ. देवेनद्र मिश्र एवं आचार्य रामदेव झा

346. अवनीश कुमार
प्रमेयकमलमार्त्तण्ड में प्रतिपादित शब्द का स्वरूप ।
निर्देशिका : प्रो. दीप्ति त्रिपाठी

347. खुराना (सोनिया)
संस्कृत काव्यशास्त्र में आचार्यों की रीतिविषयक अवधारणा ।
निर्देशक : डॉ. रमाकान्त उपाध्याय

348. गौड़ (मीतू)
वर्ष कुण्डली में प्रमुख योग ।
निर्देशक : प्रो. देवेन्द्र मिश्र

349. चावला (गौरी)
अथर्ववैदिक मंत्रों में आत्म-संरक्षण-बल।
निर्देशिका : डॉ. उर्मिला रूस्तगी

350. जय इन्द्र
उपनिषदों में निहित सांख्य तत्त्वों का समीक्षात्मक अध्ययन।
निर्देशिका : डॉ. शकुंतला पुंजानी

351. जैन (पूजा)
केरल प्रश्न सङ्ग्रह का विवेचनात्मक अध्ययन।
निर्देशक : डॉ. पुनीता शर्मा

352. द्विवेदी (तरूण कुमार)
मध्वाचार्यप्रणीतम् तत्त्वसङ्ख्यानम् का अध्ययन।
निर्देशिका : प्रो. अवनीन्द्र कुमार

353. धर्मेन्द्र कुमार
मण्डलब्राह्मणोपनिषद् एवं पातंजल योग-दर्शन।
निर्देशक : डॉ. मदन मोहन अग्रवाल

354. मिश्र (अनीश)
भण्डारकरोपाहः पं. श्रीत्र्यम्बमकशर्मा कृत विवेकानन्द-चरित महाकाव्य का काव्यशास्त्रीय अध्ययन ।
निर्देशक : डॉ. गिरीशचन्द्र पन्त

355. मिश्र (राजीव कुमार)
फलितशास्त्र में रिपु-ऋण-रोग विचार।
निर्देशक : प्रो. देवेन्द्र मिश्र

356. प्रदीप कुमार
आचार्य वराहमिहिर कृत योगयात्रा का समीक्षात्मक अध्ययन।
निर्देशक : प्रो. देवेन्द्र मिश्र एवं डॉ. रामदेव झा

357. BRATA (Satya)
The Nyaya Vedanta Conception of Reasoning.
Supervisor : Prof. Madan Mohan Agarwal

358. बिंवाल (ज्योतिसारसर)
पंडित रघुनाथ प्रसाद चतुर्वेदीकृत श्रीजवाहरज्योतिर्महाकाव्यम् का साहित्यिक अध्ययन।
निर्देशिका : डॉ. शारदा शर्मा

359. परवीन बाला
गुप्तकालीन अभिलेखीय साक्ष्यों के आधार पर गुप्तों की विदेश नीति।
निर्देशिका : डॉ. सविता निगम

360. राजेश कुमार
न्याय और मीमांसा में पदार्थ-मीमांसा।
निर्देशिका : प्रो. मदन मोहन अग्रवाल

361. SHALINI (R)
Astrological Elements in the Works of Kalidasa.
Supervisors : Prof. Devendra Mishra and Dr. Girish Pant